INDIAN STREAMS RESEARCH JOURNAL
ISSN NO : 2230-7850
IMPACT FACTOR : 5.1651 (UIF)
VOLUME - 11 | ISSUE - 12 | JANUARY - 2022

वैदिक वाङ्मय और राष्ट्रीयता

डॉ. कनक रानी
प्राचार्य, आर्य महिला डिग्री कालेज, शाहजहांपुर

प्रस्तावना–

वैदिक संहिताओं ने राष्ट्रभक्ति के स्वर यत्र तत्र गुंजायमान किए। भारतीय संस्कृति में नैतिक मूल्यों के अंतर्गत राष्ट्रीयता को सर्वोच्च मूल्य के रूप में मान्यता प्राप्त है– राष्ट्र देवो भव। मानव राष्ट्र का ऋणी है। अतः मानव की राष्ट्र के प्रति स्वकर्तव्य तथा अगाध निष्ठा समीचीन हैं। वेदों में राष्ट्रीयता, राष्ट्र की सुरक्षा, सुस्थिरता, सुदृढ़ता, सुव्यवस्था, समृद्धि की दिशा प्रशस्त है। राष्ट्रीयता मानव को राष्ट्र प्रेम के लिए प्रेरित करती है, राष्ट्र के प्रति निष्ठा से संयुक्त करती है, राष्ट्र के प्रति समर्पण के लिए उद्यत करती है। राष्ट्रीय प्रगति के लिए मानव की गतिशीलता आवश्यक है।

उद्देश्य–

वर्तमान परिप्रेक्ष्य में राष्ट्र अनेक प्रकार की समस्याओं का सामना कर रहा है। वेदों में प्रतिपादित नीतियों और शिक्षाओं के माध्यम से कदाचित इन समस्याओं का हल निकाला जाना संभव है। वेदों में राष्ट्रीय प्रेम को जगाने का प्रयास किया गया। राष्ट्र को समृद्धिशाली बनाने का प्रयत्न किया गया। राष्ट्र हित में ही नागरिकों के हित अनुभूत किया जा सकता है। राष्ट्रीय समृद्धि के मूल में राष्ट्र प्रेम की संस्थिति होती है। अतः वेदों में निहित राष्ट्रीयता की अवधारणा के संदेश को आत्मसात करना उचित है।

निष्कर्ष–

वेदों में राष्ट्र भक्ति परक मंत्र प्रेरणा देते हैं कि राष्ट्रीयता एक उदात्त विचारधारा है। यह राष्ट्र के प्रति मानव को सकारात्मक विचारों से संयुक्त करती है। राष्ट्र की समृद्धि राष्ट्र वासियों के लिए सुख और शांति का मार्ग प्रशस्त करती है। अतः राष्ट्रकल्याण को लक्ष्यगत करते हुए परस्पर भावात्मक अनुकूलता अपेक्षित है, एक दिशा में गतिशीलता अपरिहार्य है। सद्भाव, संवेदना, सहानुभूति, सामंजस्य, त्याग, प्रेम, एकता पराक्रम सदृश उदात्त मूल्यों से मानव सर्वथा परिपूर्ण रहे और राष्ट्र में सकारात्मक वातावरण को प्राथमिकता दे।

बीज शब्द– राष्ट्रीयता, सुरक्षा, समृद्धि, सुस्थिरता, प्रगति, प्रेम

राष्ट्रहित से संदर्भित विचारणा राष्ट्रीयता है। सामाजिक, धार्मिक, राजनैतिक, सांस्कृतिक क्षेत्रों में सकारात्मकता लाने का प्रयास प्रत्यक्ष और परोक्ष रूप में राष्ट्र को संगठित करता है और राष्ट्रीयता को मुखर करता है। राष्ट्रीयता की मूल अवधारणा वेदो में निहित है। इस तत्व का विशद वर्णन वैदिक संहिताओं में मिलता

है। जीवन के उदात्त भावों में राष्ट्रीयता भी परिगणित होती है। देश को प्रगतिशील करना ही राष्ट्रीयता है। देश की एकता के लिए प्रयत्नशील होना ही राष्ट्रीयता है। देश की अखंडता के संदर्भ में सजगता ही राष्ट्रीयता है। तन– मन– धन से राष्ट्र के प्रति समर्पण ही तो राष्ट्रीयता है।

वैदिक वाङ्मय में यत्र–तत्र राष्ट्रीयता के स्वर मुखरित हैं। यहां राष्ट्रवासियों के कर्तव्य और दायित्व उल्लिखित हैं। राष्ट्र की प्रगतिशीलता की संकल्पना को साकार करने की दिशा भी प्रदर्शित है। राष्ट्र के संरक्षा के लिए उसमें रहने वाले लोगों का सजग होना आवश्यक है। राष्ट्रीय जागरूकता के द्वारा ही राष्ट्र की स्थिरता सुनिश्चित की जा सकती है। वेदों में राष्ट्रीय जागृति का संदेश दिया गया–

वयं राष्ट्रे जागृयाम पुरोहिताः।1

यहां 'पुरोहित' शब्द संदेश दे रहा है कि लोगों को राष्ट्रहित के निमित्त अग्रणी होना विहित है। राष्ट्रीय उन्नति के लिए नागरिकों द्वारा विविध क्षेत्रों में ज्ञानार्जन, क्रियान्वयन में अग्रसर रहकर स्वदेश को शिखर पर प्रतिस्थापित करने का मार्गप्रशस्त होता है।

यह उच्चतम भाव चारों वेदों में यत्र– तत्र दृष्टिगत होता है। जन्मभूमि का मनुष्य के ऊपर ऋण है जिससे उऋण नहीं हुआ जा सकता। यह राष्ट्र प्रेम ही है जो मनुष्य प्राणों का बलिदान करने के लिए भी उद्यत रहता है। अथर्ववेद के अन्तर्गत पृथिवी सूक्त में निहित मंत्र राष्ट्रभक्ति को जगाने में प्रबल सहायक है।

राष्ट्र प्रेम एक उदात्त नैसर्गिक भाव है। राष्ट्र प्रेम उत्कृष्ट जीवन मूल्य है। राष्ट्र प्रेम सर्वोच्च नैतिक आदर्श है। राष्ट्रप्रेम के बिना तो राष्ट्र की प्रगति संभव ही नहीं। राष्ट्र प्रेम ही जीवन को सार्थकता देता है। राष्ट्र प्रेम ही राष्ट्र को संगठित है। पशु–पक्षी भी अपने निवास स्थली से प्रेम करते हैं, तो मानव इससे अस्पृष्ट कैसे हो सकता है? मानव मन में अपने राष्ट्र के प्रति नैसर्गिक प्रेम है– जननी जन्मभूमिश्च स्वर्गादपि गरीयसी। निस्सन्देह, राष्ट्रप्रेम जीवन का उच्चतम भाव है। राष्ट्रहित के लिए निज कर्तव्यों को प्राथमिकता देना चाहिए। हिन्दीकवि का तो मानना ही है कि–

वह हृदय नहीं पत्थर है, जिसमें स्वदेश का प्यार नहीं।

मातृभूमि मानव के लिए सर्वस्व है। माता का प्रेम सर्वातिशायी होता है। राष्ट्र के प्रति मानव के अनन्य प्रेम के संदर्भ में माता और पुत्र के मध्य निःस्वार्थ व सहज प्रेम दृष्टांत बना। यह पृथ्वी मेरी मां है और मैं इसकी संतति–

माता भूमिः पुत्रोऽहम् पृथिव्याः।2

यह वैदिक शब्दावली अनन्य राष्ट्रप्रेम की परिचायक है। वैदिक संहिताओं में राष्ट्र और मानव के मध्य सर्वोत्कृष्ट आत्म्य भाव निरूपित किया गया। भूमि, विश्वंभरा, वसुंधरा, वसुधा, वसुधानी, हिरणवक्षा, जगत निवेशनी, पृथ्वी को समुन्नत बनाने के लिए मानव का नैतिक दायित्व है। वेदों में राष्ट्रीय प्रार्थना की गई कि–

आ ब्रह्मन् ब्राह्मणो ब्रह्मवर्चसी जायतामा
राष्ट्रे राजन्यः षूरइषव्यो अतिव्याधि महारथो जायताम्
दोगध्री धेनुवोढानड्वानाशु सप्ति पुरन्धियोषा
जिष्णु रथेष्ठो सभेयो युवास्य यजमानस्य वीरो जायताम्
निकामे निकामे नः पर्जन्यो वर्षतु फलवत्यो
न ओषधयः पच्यन्तां योगक्षेमो नः कल्पताम्।।3

इस मंत्र का अभिप्राय है स्वराष्ट्र में ब्राह्मण तेज धारी, शक्ति संपन्न हों और शत्रुओं का संहार करने में सक्षम हों। गो आदि पशु दुग्धदायी हों और अश्व आदि भारवाही। सुभग नारी राष्ट्र को बढ़ाने वाली हों। पुत्र

यजमान हों, सशक्त और सभ्य हों। पर्जन्य की वर्षा हो और संताप दूर हो। वनस्पतियां फलों से संयुक्त हों। हमारी स्वतंत्रता योगक्षेम से संरक्षित हो। यह प्रार्थना मंत्र राष्ट्रीय समृद्धि की कामना से ओतप्रोत है। यह राष्ट्र की सर्वांगीण उन्नति के संदर्भ में प्रेरणा से ओतप्रोत है। अथर्ववेद के अंतर्गत पृथिवी सूक्त में राष्ट्र को विस्तारित करने की कामना और प्रार्थना उल्लिखित है–

असंबाधं मध्यतो मानवानां
यस्या उद्वतः प्रवतः समं बहु।
नानावीर्या औषधीर्या बिभर्ति
पृथिवी नः प्रथतां राध्यताम नः।।4

राष्ट्र में रहने वाले लोगों की गुणवत्ता का प्रभाव राष्ट्र की संस्कृति तथा संस्थिति पर पड़ता है। यही कारण है कि देशवासियों द्वारा सत्यप्रियता, ऋत (नियम), दीक्षा, तप, ज्ञान, यज्ञ, परस्पर सौहार्द, सौमनस्य, स्वार्थ त्याग को आत्मसात करना आवश्यक है। पृथ्वी किन तत्वों से संरक्षित होती है इसका उल्लेख वेदों में किया गया है। यह निर्विवाद तथ्य है कि सत्य आदि गुण ही पृथ्वी को धारण करते हैं–

सत्यं बृहद् ऋतमुग्रं दीक्षा तपो
ब्रह्म यज्ञः पृथिवीं धारयन्ति।
सा नो भूतस्य भव्यस्य पत्न्युरुं
लोकं पृथ्वी नः कृणोतु।।5

राष्ट्रीय एकता, राष्ट्रीय प्रेम, राष्ट्रीय अखंडता, राष्ट्रीय सुरक्षा, राष्ट्रीय समृद्धि के संदर्भ में वेदों में शिक्षित किया गया। वेदों का उद्‌बोधन राष्ट्र रक्षा के निमित्त प्रेरित करता है, राष्ट्रोत्थान के लिए नव स्फूर्ति से संयुक्त करता है, राष्ट्र एकता के लिए नव संदेश देता है। वेदों में समृद्धशाली राष्ट्र की कामना की गई। राष्ट्र को गौरवशाली बनाने के लिए राष्ट्र के प्रति प्रेम और निष्ठा से संयुक्तता अपरिहार्य है।

यह पृथ्वी जल, पर्वत, झरने, नदी, अन्न, वनस्पति, औषधि, पशु– पक्षी आदि प्राकृतिक संपदाओं से सर्वथा परिपूर्ण है। पृथ्वी के उपकारों के प्रति कृतज्ञता के साथ कर्तव्य और दायित्व का स्मरण आवश्यक है। यहां कामना है कि पेय जल और दुग्ध से शक्तिसम्पन्न बनाने बाली हमारी निवासस्थली सदा सुस्थिरता एवं सुदृढ़ता को प्राप्त हो–

यस्यां समुद्र उत सिंधुरापो
यस्यां अन्न कृष्टयः संबभूवुः।
यस्यामिदम् जिन्वति प्राणदेजत्
सा नो भूमिः पूर्वपेये दधातु।।6

देश में शांति– समृद्धि– बंधुत्व– एकत्व की अभिवृद्धि की दिशा में बढ़ना राष्ट्रवासियों का दायित्व है। नागरिकों से राष्ट्र विकास एवं राष्ट्र संगठन के संदर्भ में कृतज्ञता की अपेक्षा है। यहां राष्ट्रोत्थान हेतु मानव ने भूरि–भूरि कामना एवं आराधना की।

जातीयता, प्रांतीयता, सांप्रदायिकता आदि राष्ट्रीयता में बाधक तत्व हैं। अतः इनसे पृथक्करण हेतु प्रयास किया जाना चाहिए। राष्ट्रीय सामर्थ्य के विकास का लक्ष्य राष्ट्रीयता की तीव्र अभिव्यंजना है। राष्ट्रहित में भेदभाव को तिलांजलि देना उचित है। सर्वात्मना शक्ति से राष्ट्रोन्नति के प्रयास में जुट जाना ही उपयुक्त है। हम जिस धरती में पलते– बढ़ते हैं, जीवन जीते हैं, अपना अस्तित्व संवारते हैं, उसकी सुरक्षा, सुस्थिरता एवं सुदृढ़ता नैतिक कर्तव्य है। अतः मानव को इस सर्वोच्च कर्तव्य का पालन सुनिश्चित करना वांछित है।

पृथिवी– वंदना से संदर्भित उद्‌गार मातृ स्तुति व मातृ प्रशस्ति में समर्पित हैं। इसके पर्याय सूक्ष्म अर्थभेद से मानव के प्रति पृथ्वी के उपकारों का प्रकटीकरण करते हैं। पृथ्वी के प्रति कृतज्ञता के वषीभूत होकर मानव द्वारा इसका स्तवन किया गया।

राष्ट्र की स्थिति राष्ट्रवासियों की मनोवृत्ति और क्रियान्विति पर आधारित होती है। राष्ट्रवासियों के चरित्र द्वारा ही राष्ट्र का चरित्र ज्ञापित होता है। अतः यह आवष्यक है कि मनुष्य द्वारा सौमनस्य, सामंजस्य को अपनाया जाए और देश के प्रति सर्वोच्च सम्मान को व्यक्त किया जाए।

मानव द्वारा आश्रयदात्री, पोषयित्री, जलदात्री, अन्नदात्री पृथ्वी के प्रति समर्पित व निष्ठावान रहना नीतिप्रेरित है। राष्ट्रीय संसाधनों का सदुपयोग किया जाए, राष्ट्रीय संपदाओं की संरक्षा पर ध्यान केंद्रित किया जाए–

विश्वस्व मातरमोषधीनां ध्रुवां भूमिं पृथिवीं धर्मणा धृताम्
शिवां स्योनामनु चरचरेम विश्वहा।।7

वेदों में राष्ट्र का गुणगान किया गया। स्मरणीय है, राष्ट्र के संरक्षण के प्रति मानव की प्रतिबद्धता आवश्यक है। राष्ट्रप्रेम का क्षीण होना राष्ट्र के लिए हितकर नहीं। यहां निष्कंटक राष्ट्र की संकल्पना की गयी–

अजीतो हतो अक्षतोऽध्यष्ठां पृथिवीमहम्।।8

राष्ट्रोन्नति के लिए निज कर्तव्यबोध आवश्यक है। संरक्षित एवं सुदृढ़ राष्ट्र में ही नागरिक समृद्ध जीवन जीते हैं। भारत भूमि की गौरव गाथा सर्वत्र वर्णित है। पृथ्वी को माता और पर्जन्य को पिता बता कर राष्ट्र प्रेम की अभिव्यक्ति की है। पृथ्वी समृद्ध हो और सब के लिए सुखद हो। पृथ्वी की अनुकंपा से भाव विभोर होकर मानव ने बहुषः उसका यशोगान किया–

यत् ते मध्यं यच्च नभ्यं।
यास्त नो उर्जस्तन्वः संबभूवुः
तासु नो धेह्यभि नः पवस्व।
माता भूमिः पुत्रोहं पृथिव्याः
पर्जन्यः पिता स उ नः पिपर्तु।।9

ध्यातव्य है कि राष्ट्र, राष्ट्र वासी और राष्ट्रीय संस्कृति यह तीन प्रधान तत्व होते हैं। राष्ट्र हित में ही नागरिक का भी हित है। राष्ट्रीय उत्थान के लिए राष्ट्रीय संस्कृति और सम्मान का संरक्षण मानव का कर्तव्य है। देशप्रेम के वषीभूत हो मानव देश की एकता प्रगाढ़ करने के लिए प्रेरित होता है, देश की स्थिरता की रक्षा के लिए सन्नद्ध रहता है, देश की अखंडता के लिए प्रयत्नशील रहता है, देश की प्रगति को नई दिशा देता है। निश्चय ही, वैयक्तिक हितों का परित्याग कर देशहित में संलग्नता समीचीन है।

राष्ट्र पराक्रम से संरक्षित होता है, निष्कंटक बनता है। वेदों में कहा गया है कि पूर्वजों द्वारा संरक्षित की गई पृथ्वी जल और दुग्धादि से समृद्ध हो सुखदायिनी बने–

यामश्विनामिमातां विष्णु र्यस्यां विचक्रमे
इन्द्रो यां चक्र आत्मने न मित्रां षचीपतिः।
सा नो भूमिर्विसृजताम् माता पुत्राय मे पयः।।10

पृथिवी सूक्त में सभी मंत्र राष्ट्रभक्ति से ओतप्रोत हैं। यहां पराक्रमपूर्ण पूर्वजों द्वारा रक्षित राष्ट्र की सुरक्षा, समृद्धि के स्वर सर्वत्र गुंजायमान हैं। यह मानव को पराक्रम के संयुक्त होने का संदेश देता है–

यस्यां पूर्वे पूर्वजन्मा विचक्रिरे
यस्यां देवा सुरान्भ्यवर्तयन्
गवामष्वानां वयसष्च विष्ठा
भगं वर्चः पृथिवी नो दधातु।।11

राष्ट्रीय जागरण की अतीव आवश्यकता है उन्नति के लिए। अतएव आलस्य से मुक्त रहकर कर्मशील बनना ही अपेक्षित है। मानव मन– वचन– कर्म द्वारा राष्ट्र के प्रति कृतज्ञता से परिपूर्ण हो, राष्ट्रहित में गतिशील हो। यहां 'नः' शब्द से पृथ्वी के प्रति अपने दायित्व का बोध जगाया गया है–

यां रक्षन्त्यस्वप्ना विश्वदानी देवा भूमिं पृथिवीमप्रमादम्।
सा नो मधु प्रियं दुहामथो उक्षतु वर्चसा।।12

वेदों में संदेश दिया गया कि राष्ट्रवासियों द्वारा अनन्य निष्ठा व अखण्ड आस्था के साथ देश के विकास, देश के सुधार व देश की समस्याओं के निराकरण के लिए सक्रिय भागीदारी की आवश्यकता है। राष्ट्रहित में वैयक्तिक तथा सामूहिक रूप से सक्रिय योगदान करना चाहिए। अनेक प्रकार की विसंगतियों के मध्य मैत्री भावना देश की एकता में प्रमुख भूमिका का निर्वाह कर सकती है और वैचारिक अवरोधों को शांत कर सकती है। द्वेष आदि से दूर रहते हुए राष्ट्र को संगठित करने की दिशा में सक्रियता अपेक्षित है। स्मरणीय है कि व्यक्तिगत रूप से किए गए छोटे–छोटे कार्य देश की प्रगति में सहयोगी बन जाते हैं।

संदर्भ ग्रन्थ सूची–

1– यजुर्वेद / 9 / 23
2– अथर्ववेद / 12 / 1 / 12
3–यजुर्वेद / 22 / 22
4– अथर्ववेद / 12 / 1 / 2
5– अथर्ववेद / 12 / 1 / 1
6– अथर्ववेद / 12 / 1 / 3
7– अथर्ववेद / 12 / 1 / 17
8– अथर्ववेद / 12 / 1 / 11
9– अथर्ववेद / 12 / 1 / 12
10– अथर्ववेद 12 / 1 / 10
11– अथर्ववेद 12 / 1 / 5
12– अथर्ववेद / 12 / 1 / 13